इकाई 32 नरेश मेहता

इकाई की रूपरेखा

32.0 उद्देश्य
32.1 प्रस्तावना
32.2 कवि परिचय
  32.2.1 रचनाकार व्यक्तित्व
  32.2.2 रचनाएँ
  32.2.3 काव्ययात्रा
32.3 काव्य संवेदना
  32.3.1 ऐतिहासिक सांस्कृतिक अनुभूति का खरापन
  32.3.2 मानव और प्रकृति
  32.3.3 युद्ध, आधुनिकता और पीड़ा
  32.3.4 विचारधारा और जीवन-दर्शन
32.4 अभिव्यंजना शिल्प
  32.4.1 काव्यरूप
  32.4.2 काव्य-भाषा
  32.4.3 बिंब-प्रतीक
  32.4.4 उपमान योजना
  32.4.5 छंद और लय
32.5 काव्य वाचन और संदर्भ सहित व्याख्या
32.6 मूल्यांकन
32.7 विचार संदर्भ और शब्दावली
32.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें
32.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

32.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- नरेश मेहता के काव्य-परिवेश का परिचय दे सकेंगे,
- कवि के जीवन, रचनाकार व्यक्तित्व एवं रचनाओं के विषय में जानकारी दे सकेंगे,
- नरेश मेहता की काव्य-संवेदना तथा काव्यानुभूति से गहराई में जाकर साक्षात्कार करा सकेंगे,
- उनके धरती, प्रकृति, संस्कृति, परंपरा संबंधी दृष्टिकोण की झांकी प्रस्तुत कर सकेंगे,
- कवि की मूल वैचारिक भूमि बता सकेंगे,
- कवि के अभिव्यंजना शिल्प, काव्यरूप, काव्य-भाषा, काव्य बिंब-प्रतीक, उपमान योजना, छंद एवं लय का अध्ययन-आस्वादन कर सकेंगे,
- नयी कविता के अन्य कवियों से तुलना करते हुए उनके काव्य की विशिष्टताओं की एक समग्र छवि बना सकेंगे।

32.1 प्रस्तावना

नयी कविता के कवियों में नरेश मेहता सर्वाधिक सशक्त और समृद्ध सांस्कृतिक मनोभाव के रचनाकार हैं। कवि-कर्म के संबंध में उनका दृष्टिकोण मूलतः मानव स्वाधीनता और मुक्ति का हिमायती है। युग-परिवेश के दबावों, द्वन्द्वों, संघर्षों और आंतरिक टकराहटों के बीच उनकी जीवन-आस्था और मूल्य-दृष्टि अडिग रहती है। उनके रचना-कर्म की आस्था और गरिमा का सारा वातावरण भारतीय इतिहास, पुराण, मिथक और ऋषि कल्पनाओं की शक्ति से निर्मित होता है। आदिम प्रकृति का मुक्त सौन्दर्य और जीवन का प्रकृत उल्लास, रूप, रस, अनुभव, यथार्थ और मूलरागों को मूल से गहने की अद्भुत क्षमता है। वे अपने समसामयिक कवियों में कुँवरनारायण, धर्मवीर भारती आदि की भाँति इतिहास और पुराण के चरित्रों, घटनाओं को नए सन्दर्भों, समस्याओं, प्रश्नाकुलताओं और चिन्ताओं को व्यंजित करते हैं। हिंदी की उदात्त मूल्यवादी क्लासिक संवेदना की परंपरा उनके रचना कर्म में प्रतिफलित होती है। उनकी कविता के कथ्य और रूप दोनों पर वैदिक उपनिषद्-परंपरा की संस्कारी ध्वनि का गहरा प्रभाव है।

32.2 कवि परिचय

नरेश मेहता ने जीवन के अभावों अवहेलनाओं और संघर्षों से जूझकर जीवन की शक्ति अर्जित की है। उनका जन्म 1924 में मालवा (शाजापुर) के एक गुजराती परिवार में हुआ। आस्तिक पिता बिहारीमल शुक्ल के घर में जन्में नरेश बचपन में ही मातृविहीन हो गए। उन्हें कष्ट और कड़वाहट दोनों का अर्थ जल्दी समझना पड़ा। इसी मनोभूमिका ने वैष्णव भाव दृष्टि को उनके व्यक्तित्व में एकाकार कर दिया। काशी विश्वविद्यालय से एम. ए. किया। इसी बीच "केन्द्रीय प्रशिक्षण संस्थान, देहरादून से सेकिण्ड लेफ्टीनेंट का प्रशिक्षण प्राप्त किया। यहीं पर प्रथम उपन्यास "ट्रेन्चेज के पीछे" लिखा जिसे राजनीतिक विचारों की उग्रता के कारण जब्त कर लिया गया। लखनऊ, प्रयाग, नागपुर के आकाशवाणी केन्द्रों पर नौकरी की पर मन न रम सका। दिल्ली से "साहित्यकार" पत्रिका का सम्पादन किया और कुछ समय तक "अखिल भारतीय मजदूर संघ" के मुखपत्र "भारतीय श्रमिक" का सम्पादन भी किया श्रीकान्त वर्मा के साथ "कृति" नामक साहित्यिक पत्रिका का सम्पादन किया। सन् 1957 में विवाह किया और प्रयाग में बस गए। स्वतंत्र लेखन को जीविका का आधार बनाया और यह काम आज तक जारी है। नरेश मेहता मूलतः कवि हैं और नयी कविता के कवियों में उनके काव्य-सृजन की एक विशिष्ट पहचान बनी है। उनकी आरम्भिक कविताएँ "राष्ट्र-भारती" तथा "नयी कविता" नामक प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में प्रकाशित हुईं और "दूसरा सप्तक" [1951 (सं. अज्ञेय)] की कविताओं से वे विशेष चर्चित हुए।

32.2.1 रचनाकार व्यक्तित्व

नरेश मेहता का रचनाकार व्यक्तित्व स्वाधीनता आन्दोलन की मुक्ति चेतना, भारतीय वैष्णव चिन्तन-परंपरा और सन्तों की लोकमंगल भावना के तत्वों से निर्मित हुआ। उन पर अहंवादी व्यक्तिवादी होने का सन्देह भी किया गया जिसे सच सिद्ध नहीं किया जा सका। अपनी बात पर अड़ रहना और दूसरे की गलत बात में "हाँ, हाँ" करना उनका स्वभाव नहीं रहा। उन्हें चालाक-कपटी, बुद्धिजीवी, शहरी असभ्यों से ज्यादा, ग्रामीण पसंद आते हैं। खानाबदोश लुहारों की तरह घूमना और प्रकृति-सौन्दर्य के प्रति विशेष अनुराग रखना, उनके व्यक्तित्व में रमा हुआ भाव है। अपने रचनाकार व्यक्तित्व की मानसिकता का परिचय "दूसरा सप्तक" के "वक्तव्य" में इस प्रकार दिया है — "अनाम अवस्था ने मुझे लोहे की सी प्रेरणा भी दी है। जबकि साहित्य के छायावादी और प्रगतिवादी खेमे में लगातार भगदड़ मची हुई थी। वे दिन छायावाद की पदच्युति के दिन थे और प्रगतिवादी सिंहासन रूढ़ हो रहा था। अवसरवादी पनपे और खूब पनपे। अवसरवादी रोमांस का मोह छोड़ न सके थे, इसलिए वे वापस 'कसक्न', 'भसकन' गाने लगे है। उन क्रांतिकारी कवियों के घर या तो बांसुरियाँ बज रही हैं या फिर हंसों की टोलियाँ उड़ रही हैं।" मार्क्सवादी मोह-भंग और कवि अज्ञेय के विचारों के प्रति आस्था नरेश के रचनाकार व्यक्तित्व का अंग रही है। काव्य लिए वे वेद-उपनिषद् की परंपरा को अपनाते हैं और उसे ही आगे बढ़ाते रहे हैं। वास्तविकता यह है कि नरेश अपने रचनाकार व्यक्तित्व में छायावादी-रहस्यवादी भ्रामक कुहेलिका से मुक्त रहे हैं। वे नए प्रयोगों के द्वारों में बंद नहीं हुए हैं। "हिंदी में प्रयोगों की आवश्यकता दिन पर दिन बढ़ती जा रही है। विगत अनुकरणीय नहीं हो सकता। हाँ, शोभालंकार बनकर रह सकता है। नया तो मेरा युग है, मेरी प्रकृति है तथा सबसे नया मैं हूँ।" (दूसरा सप्तक वक्तव्य) कहना न होगा कि भारतीय मूलचिंतन धारा के स्रोतों से जुड़कर ही नरेश जी के रचनाकार व्यक्तित्व का रचनात्मक परिष्कार और भाव-उन्नयन हुआ है। वे कवि, उपन्यासकार, नाटककार, सम्पादक और आलोचक एक साथ रहे हैं, पर मूलतः कवि हैं।

32.2.2 रचनाएँ

नरेश मेहता ने छायावादी युग से लिखना शुरू किया। प्रगतिवाद-प्रयोगवाद नयी कविता के युगों में निरंतर लिखा और समसामयिक कविता में भी उनकी सक्रियता का विशेष महत्व है। वे प्रबंध और मुक्तक दोनों काव्य धाराओं को आत्मसात करते हुए सृजनकर्म में आगे बढ़े हैं।

प्रबन्ध कृतियाँ : (1) संशय की एक रात, (2) शबरी, (3) महाप्रस्थान, (4) प्रवाद पर्व।

मुक्तक कृतियाँ : "वन पाखी सुनो" (1957), "उत्सवा" (1979), "तुम मेरा मौन हो" (1982), "मेरा समर्पित एकान्त" (बोलने दो चीड़ को), "समय का भिक्षु", "पुनः भिक्षु", "अरण्या" (साहित्य अकादमी पुरस्कार 1989), (दूसरा सप्तक) की कविताएँ।

उपन्यास : डूबते मस्तूल, यह पथ बन्धुता, धूमकेतुः एक श्रुति, दो एकान्त, नदी यशस्वी, प्रथम फाल्गुन, पुनः एक युधिष्ठिर, उत्तरगाथा आदि।

कहानी संग्रह : "तथापि", "एक समर्पित महिला", "बन्ध छबि"।

एकांकी नाटक : "सनोवर के फूल"।

नाटक : "सुबह के घण्टे" तथा "खंडित यात्राएँ"।

सम्पादन : "वाग्देवी", "गांधी गाथा"।

निबंध : "काव्य का वैष्णव व्यक्तित्व"।

नरेश मेहता ने "संशय की एक रात", "शबरी" तथा "प्रवाद पर्व" तीनों प्रबंध काव्यों में राम-काव्य परंपरा का आधुनिक संदर्भों में उपयोग किया है। केवल "महाप्रस्थान" महाभारत के धर्मराज की नैतिक गाथा है। इन चारों प्रबंध काव्यों में

विशेष बात यह है कि उनमें प्राचीन मिथकों को सुरक्षित रखते हुए उसके भीतर नए अर्थ की प्रतिष्ठा की गई है। अपने देश और काल के नए प्रश्नों को इन कृतियों ने वैचारिक धरातल पर उठाया है। ''संशय की एक रात'' मानव की ऐतिहासिक-सामाजिक चिंता का रचनात्मक अनुभव है और नयी कविता की सृजनात्मक उपलब्धि।

32.2.3 काव्ययात्रा

नरेश मेहता ने सन् 1937 ई. से लिखना शुरू किया, लेकिन उनकी कविताओं का संकलित रूप ''दूसरा सप्तक'' 1951 ई. (सं. अज्ञेय) में सामने आया। ''चाहता मन'', ''अहं'', ''किरन धेनुए'', ''उषस-1-4'', ''जन गरवा चरैवित'', ''उषस'', ''अश्व की बल्गा'' और ''समय/देखता'' जैसी कविताओं के नए काव्य-मुहावरे ने कवि को प्रसिद्धि दी तथा आदिम आग से साक्षात्कार कराया। उन्होंने कहा ''संस्कृति'' भ्रामक शब्द है। फिर भी संस्कृति की शोध तो की ही जा सकती है और हम मनुष्य के आदिकाल के काव्य से भावों की विराटता ग्रहण करके सुन्दर कल्पना प्रधान साहित्य रच सकते हैं। इस प्रकार के प्रयोगों के उदाहरण रूप में मेरी ''उषस'' है। ऋतु की इस नित्य कौमार्य कन्या का मैं प्रतिदिन अपने क्षितिज पर आह्वान करता हूँ। वह हमारे खेतों में अपने पति सूर्य के साथ हमारे बीजों में गरम-गरम किरनें बोकर गेहूँ उपजाती है। इस दृष्टि से कवि मन में आदिम संवेदना के मूल राग बीज-भाव बनकर कविता में मौजूद हैं।

वे अपनी काव्ययात्रा में छायावादी रहस्यवादी भाव-लोक से शीघ्र ही मुक्ति पा जाते हैं और जीवन-वास्तव की वास्तविकता को रचना-कर्म में निष्पन्न करने लगते हैं। प्रकृति और नारी के प्रति प्रेम की स्थिति ''चाहता मन'', ''तुम यहाँ बैठी रहो'', ''उड़ता रहे चिड़ियों सीखा वह तुम्हारा श्वेत आंचल'' विवरण और वर्णन की पुरानी लीक को छोड़कर उनका कवि मन सृजन-सौन्दर्य के नए बिंबों से अपने तथा अपने युग के मनोभावों को अभिव्यक्ति देने लगता है। उनके संवेदनशील कवि हृदय को युग यथार्थ मथने लगता है। 'वनपाखी सुनो' की रचनाओं में कवि हृदय फैलना चाहता है, आत्मविस्तार के साथ जीवन को रचना चाहता है। प्रकृति संवेदना ही इस प्रथम काव्यसंग्रह की कविताओं की मूल प्रेरणा है। कवि बदली, मेघ, वर्षा, डूबती संध्या, वनपाखी, मालवी फाल्गुन, पीले फूल कनेर के लेकर मालवा की गंध से कविता निचोड़ता है। कवि लोक गीतों की संवेदना ''दौड़ी हिरना, बन-बन अंगना, बैन वनों की चोर मुरलिया, कागा बोले मोरी अटरिया'' जैसी लोक धुनों में गाता है। ''बोलने दो चीड़ को'' लेकर ''अरण्या'' तक की लम्बी काव्ययात्रा प्राकृतिक संवेदना और प्रकृति लय की चेतना का विस्तार है। यह पूरी कविता धूप-चांदनी-फूलों का स्तबक दृष्टिगत होती है। साथ ही वेद-उपनिषद की भावधाराएँ गीतों से झूमती हुई पाठकों के हृदय में प्रवेश कर रही है।

नरेश मेहता की काव्ययात्रा का एक पथ प्रबंध कविता की ओर जाता है। वे परंपरागत कथाकाव्य से समझौता नहीं करते। इतिवृत्त को तोड़-मरोड़कर नया रूप देते हैं और नए प्रबंध को स्थापित करते हैं। ''संशय की एक रात'', ''शबरी'' ''प्रवाद पर्व'' तथा ''महाप्रस्थान'' परंपरागत अर्थ में प्रबंध के पुराने अनुशासनों को तोड़ देते हैं। हरिऔध के प्रियप्रवास और मैथिलीशरण गुप्त के ''जयद्रथ वध'' वाली इतिवृत्तात्मकता उनमें नहीं है। उनके सभी प्रबंध काव्य कथा के वैचारिक आधार को सूक्ष्मता से ग्रहण करते हैं। पौराणिक आख्यानों को लेकर वे युद्ध, राजनीति, सामाजिक-सांस्कृतिक संकट का संकेत देते हैं। ''संशय की एक रात'' राम के माध्यम से आधुनिक मानव के द्वन्द्व तनाव की मनःस्थिति को व्यक्त करती है। राम का प्रश्नाकुल और द्विधाग्रस्थ विभाजित व्यक्तित्व आज के मानव का यथार्थ प्रतीक है। ''प्रवाद पर्व'' 1975 की स्थिति परिस्थितियों के बीच रचा गया काव्य है। सीता के लोक प्रवाद को लेकर वे राजतंत्र और राजनीति के ज्वलंत प्रश्नों को उठाते हैं। ''शबरी'' काव्य में वे मानवीय समस्या को वर्ण व्यवस्था के संदर्भ में उठाते हैं और उसे आधुनिक दृष्टि से समाधान देते हैं। कवि का चौथा प्रबंध काव्य ''महाप्रस्थान'' मूलतः 'महाभारत' के ''महाप्रस्थानिक पर्व'' से कथा को उठाता है। कथा से युद्ध और राजनीति के अमानवीय, विकृत पहलुओं पर काव्यात्मक टिप्पणी करता है।

नरेश मेहता की काव्ययात्रा परिवेश के साथ जूझती चलती है। प्रकृति सौन्दर्य चेतना की केन्द्रीयता, दृष्टि विकास का संकेत है और यांत्रिकता, शहरीकरण, विज्ञान की आमानवीयता से मानव को बचाने का प्रयास भारतीय जीवन मूल्यों को अनुभवों के आलोक में यह काव्ययात्रा निरंतर परिभाषित करती चली आ रही है और मानव को संहार करने वाली आधुनिकता से बचाना चाहती है। वे आज भी सर्जना के क्षेत्र में सक्रिय हैं और सांस्कृतिक संवेदना की मूल्य दृष्टि या मानववादी दृष्टि के प्रति अपने कविकर्म में प्रतिबद्ध हैं।

बोध प्रश्न 1

1 सही √ गलत × का निशान लगाकर उत्तर दीजिए।

i) नरेश मेहता रोमाण्टिक संवेदना के कवि हैं। ( )

ii) नरेश मेहता उदात्त क्लासिक संवेदना के कवि हैं। ( )

iii) नरेश मेहता रहस्यवादी चेतना के कवि हैं। ( )

2 नरेश मेहता के जीवन का पाँच पंक्तियों में परिचय दीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

3 रमेश मेहता के रचनाकार व्यक्तित्व की किन्हीं दो विशेषताओं को लिखिए ।

.....

.....

4 "संशय की एक रात" की मूल संवेदना का तीन वाक्यों में उल्लेख कीजिए ।

.....

.....

.....

5 नरेश मेहता किस सप्तक के कवि हैं, सही √ गलत × का निशान लगाकर बताइये —

i) तारसप्तक (1943) ( )

ii) दूसरा सप्तक (1951) ( )

iii) तीसरा सप्तक (1959) ( )

32.3 काव्य संवेदना

नरेश मेहता की कविताएँ काव्य संवेदना की दृष्टि से एक नए दौर की शुरुआत का संकेत देती है । मानव, प्रकृति दोनों को व्यक्त करने वाली संवेदना का आधार तत्व है — उदात्त प्रेम । इस प्रेम में देश, जाति, धर्म, संस्कृति की संकीर्णता नहीं है । यह प्रेम मानव मात्र को व्यापक, मुक्त एवं उदात्त बनाता है, उसके हृदय को विश्वहृदय से मिला देता है । प्रेम की घनता ने भाव को गहराई दी है और हृदय का प्रसार किया है । प्रकृति प्रेम नरेश के कवि को जीवन की गहन संवेदनात्मक ज्ञान दृष्टि देता है — पूरी कवि मानसिकता पर करुणा का सूर्य चमकता है —

सृष्टि प्रिया पीड़ा है
कल्प वृक्ष दान समझ
शीश झुका स्वीकारो
ओ मन करपात्री! मधुकरी स्वीकारो

भारतीय संस्कृति की व्यापक भावभूमि कवि को आकृष्ट करती है और वह जीव-मात्र के प्रति करुणा और प्रेम से भर जाता है । सबसे जुड़ने और सबके हो जाने की यह आकांक्षा कवि को वैयक्तिक भावभूमि से ऊपर उठाकर निर्वैयक्तिक भाव भूमि पर खड़ा कर देती है । जीवन-जगत से यह मुक्त-हृदय का साधारणीकरण आत्म-दान और आत्म-विस्तार के कारण ही संभव हो पाया है । छायावादी रूमानियत का व्यक्तिवाद इस कविता में नहीं है — लोकमंगल की संवेदना के सूर्य-चन्द्र उदित होते हैं । कवि-संवेदना में प्रकृतिलय की वंशी बज रही है —

आओ ऋतुपति चन्द्र-सूर्य तुम
अपनी धूप चाँदनी के सौ-सौ चीवर फैलाते
मनुज घाव पर चैन शरद की चाँदनियों को
रेशम पल के हवा कर सके ।
गगन आम पर स्वर्ग कहीं बैठा-बैठा
तारों की वंशी मुझे सुनाये ।
धरती नीले तारों का परिवार बन सके ।
इसीलिए खेतों में सन्ध्या केसर बरसे ।

(समय देवता)

नए मानव के श्रम को इस काव्य-संवेदना में आदर है और मानव की जय-यात्रा में अखण्ड आस्था । घोर आत्मीयता के संवाद में कवि-कंठ फूट कर कहता है —

नए मनुज के हाथों में श्रम की रेखाएँ
आल्प्स रचेगा नए रूप में
राइन, वोल्गा, गंगा के वह इस धरती पर आज नये
जल-छंद रचेगा ।
उसके श्रम के नवल क्षितिज की ओर दौड़ते सूरज थोड़े आलोकों
की उल्काएँ लें ।
समय देवता! आज विदा लो,
किन्तु तुम्हारे रेशम में इस चमक वस्त्र में मिट्टी का विश्वास
बाँधकर भेज रहा हूँ ।

मरी धरती पुष्पवती है
और मनुज की पेशानी के चरागाह पर दौड़ रही हैं तूफानों की
नयी हवाएँ।

लम्बी कविता "समय देवता" में नरेश मेहता की काव्य-संवेदना दृष्टि विश्व दृष्टि का पर्याय हो जाती है। कवि एक वैदिक ऋषि की भाँति प्रार्थना की मुद्रा में दिखाई देता है और वह धरती के मनुष्य को सुखी देखना चाहता है। इस काव्य-संवेदना का झुकाव कृषिजीवी ग्रामीण समाज की ओर है कवि "मिट्टी का विश्वास" लेकर धरती की महिमा का गान करता है। मानव के घावों पर चाँदनी का ठंडा लेप लगाना चाहता है। अभिप्राय यह है कि नरेश मेहता धरती के साथ गहन लगाव रखते हैं। मानववादी विश्वदृष्टि, मानवीय आस्था ही उनकी संवेदना का प्रधान स्वर है। भारतीय सांस्कृतिक दृष्टि भेदों को मिटाकर अभेद की ओर बढ़ती है और यही दृष्टि इस कविता की आंतरिक पुकार है।

32.3.1 ऐतिहासिक सांस्कृतिक अनुभूति का खरापन

नरेश मेहता में काव्य-सृजन के संघर्ष की आंतरिक जागरूकता उन्हें एक ओर तो प्रकृति और संस्कृति की आदिम संवेदना से जोड़ती है दूसरी ओर परंपरा "प्रवाह" के नैरन्तर्य से। इसका प्रधान कारण यह है कि पन्त-प्रसाद-निराला की भाँति नरेश मेहता ऐतिहासिक अनुभूति के कवि हैं। यह ऐतिहासिक अनुभूति उन्हें सांस्कृतिक धड़कन का पूरा अता-पता देती है और उनके अनुभव का देश और काल व्यापक हो जाता है। प्राकृतिक सौन्दर्य उन्हें नए प्रतीक-बिंब उपमान ही नहीं देता है बल्कि गहरे स्तर पर वह उन्हें जीव-मात्र से प्रेम की ओर प्रवृत्त कर देता है। प्रकृति संवेदना के मूल स्रोतों की ओर नरेश जी उन्मुख है,और कल्पना में क्लासिकल प्रकृति दर्शन का राग झंकृत है। यह प्रकृति सौन्दर्य उनका मूल मनोभाव है। आप इसे कवि का "काव्य-स्वभाव" भी कह सकते हैं। उनका अधिकांश काव्य स्वर निवेदनात्मक है, जिसमें प्रकृति चित्रों के अतिरिक्त मनोदशाओं और मनःस्थितियों का गायन है। कवि शहरी जीवन की यान्त्रिकता, खोखली आधुनिकता और विकृत संबंध-भावना की पाशविकता के प्रति लगातार खबरदार करता रहता है। वैज्ञानिक अस्त्रों की भयावहता से भयभीत मन के लिए प्रकृति ही शान्ति का वरदान है —

1
एक स्तबक की तरह
मेरे हाथों में
मेरे पास रखा फूलों वाला
धूप भरा पूरा एक फाल्गुनी दिन है।

(बोलने दो चीड़ को)

2
मछलियों की गंधवाला जल है।
कैसा छुट्टियों का-सा मन लिए आया
हूँ।

(वही)

इस ऐतिहासिक अनुभूति में कृषिजीवन के आदिम बिंब झिलमिलाते मिलते हैं —

1
उदयाचल से किरन-धेनुएं
हाँक ला रहा वह प्रभात का ग्वाला।
× × × × × ×
बरस रहा आलोक दूध है
खेतों खलिहानों में
जीवन की नव किरण फूटती
मकई के धानों में।

2
गगन गड़रिया अपने कुहरे फेल्ट हेट में जिसे खोंस कर
बैठा हुआ आल्प्स पर्वत पर अपनी भेड़ें चरा रहा है।

(किरण धेनुएँ)

इस अनुभूति में मनुष्य का आदिम मन काफी सुरक्षित रूप से व्यक्त हुआ है। पूरा सांस्कृतिक संस्कार अखण्ड भाव परंपरा में प्रवाहित है। वैदिक, बौद्ध, जैन जैसी कृत्रिम श्रेणियाँ यहाँ नहीं है। केवल समग्र भारतीय संस्कृति के भाव-सौन्दर्य की गंध इस काव्यानुभूति में महक रही है।

32.3.2 मानव और प्रकृति

नरेश मेहता ने अपने सृजन कर्म में निरंतर साधना से हमारे वनस्पति जगत् की संवेदना को पहचानते हुए नया अर्थ दिया है। पश्चिम ने मानव को भौतिक आध्यात्मिक खण्डों में बाँट कर देखा और प्रकृति को अपनी दासी बनाकर। पर भारतीय चिंतन-परंपरा ने प्रकृति और मानव को एक और अखण्ड माना। एक के बिना दूसरे की सत्ता ही नष्ट हो जाएगी। आदमी यदि प्रकृति के साथ सहयोग-सहभाव रखेगा तो विकसित होगा, किन्तु यदि अपने को प्रकृति का स्वामी मानते हुए उसे दुहना चाहेगा तो नष्ट हो जायेगा — विकास नहीं कर सकता। पूरी भारतीय सांस्कृतिक अवधारणा में पेड़-पौधे कई अर्थों में मनुष्य के समान हैं। इस बुनियादी चिन्तन को कोई चाहे तो वैष्णवचिंतन परंपरा भी कह सकता है। नरेश जी इसी चिंतन के प्रति समर्पित हैं। नरेश मेहता के काव्य में प्रकृति विविध रूपों मे आती है — पेड़ों-फूलों की मधुर

दुनिया है। नदी, झील, आकाश, पहाड़, घाटी, जंगल, बादल, वसन्त, सावन, सन्ध्या आदि के रंग-बिरंगे चित्रों से कविता भरी पड़ी है। उषा, धूप, फूल, किरन का वर्णन तो कवि हर राग, हर सांस में करता है। एक प्रकार से यह प्रकृति भाव जीवन की संकीर्णता के खिलाफ मुक्तता तथा मानवीय स्वतंत्रता-स्वाधीनता का प्रतीक है। कवि की आकांक्षा है कि वह मस्त गीतमय अधरों से सोमरस का पान करता रहे और अपने पूर्वजों की भाँति चिंता मुक्त जीवन जिए —

1
सुख, यश, श्री बरसाओ, आओ व्योम कन्यके! सरल नयन
अरूण अश्क ले जायँ तुम्हें उस सोम देव के राज महल
नयन रागमय, अधर गीतमय, बने सोम का कर फिर पान।

(महाप्रस्थान)

2
कपिला दूध-सी यह धूप
धूप का नाम ही कैसा उत्सव है —

3
ओ अप्सरा की आँख की तरह के
धूप भरे फाल्गुनी दिन।
आज मेरे पास कोई काम नहीं है
मैं अभी इस झील में नहाऊँगा
उसके बाद
उसके बाद ये झर बेरिया हैं
चेरियों के गुच्छे हैं
हिमनी शिखरों की श्रेणियाँ हैं
केवल इन्हें देखता रहूँगा।

(बोलने दो चीड़ को)

"समय देवता" मानव के इतिहास का गवाह है। उसके संवादों में जीवनलय का मर्म दिया है —

गेहूँ के सोने जल पर "केरल सी" की हवा तैरती।
घोड़े की छाती तक ऊँची स्वर्ण बालियाँ
श्वेत सूर्य से बात कर रहीं।

इस कवि-कर्म में मीलों लम्बे चरागाह में ऊन लपेटे भेड़ों का दल चला आ रहा है। इन कविताओं में गाय को हाँकता ग्वाला, बैलों की बजती घंटिया, खेत, खलिहान, अमराई, गेहूँ की बाली, धानों के खेत बार-बार आते हैं। धरती की महिमा के गीत नदियाँ-झरने गाते चले जा रहे हैं। इस धरती को "विश्वम्भरा" सम्बोधन से कवि पुकारता है। वैदिक शब्दावली राग-रथी के साथ चली आ रही है — सोम, उषस, इन्द्र, पूषा, सविता, वरूण, भूमा, सीता, सामगान, शुचि, समिधा, किरन धेनुएँ आदि शब्द पूरे संस्कार-सन्दर्भ और इतिहास के साथ मौजूद मिलते हैं। वैदिकदर्शन प्रकृति और धरती की महिमा का जैसे गान करता था—वैसे ही नरेश जी उसका गान-स्मरण स्तुति करते हैं। कवि को पता है कि यांत्रिक सभ्यता मानव का चैन छीन रही है—मानव को प्रकृति की अनुरागमयी गोद ही शांति दे सकती है —

विश्व शांति का आह्वान इन राजनीति के भवनों में तो सदा असंभव
वह जनरव से दूर हँस रही दूब बिछाये धरती माता,
विश्वम्भरा रूपमयी वह
सरित सोम के कलश भरे बैठी पुत्रों की आस लगाये।

यह प्रकृति प्रेम पलायन नहीं है, अपनी ही जड़ों से जुड़ना है और अपने ही सही रूप से आंतरिक खोज है। यंत्र, मानव की संवेदना को मारते हैं और प्रकृति मानव-संवेदना को पल्लवित-पुष्पित करती है। प्रकृति के रंग कवि मन में "स्वर्ण किरन तुम", "से बसी लाल", "सोने की मेघ चील", "पीली वसुधा", "सन्ध्या केसर", "सेरनपर्वी दिन", "कपिला-दूध सी", "धूप की पली तितली", "चम्पक बाहें", "गोरी रेत"—जैसे अनेक प्रयोगों से उभरते हैं। हर बार कल्पना नया रंग भरती है। प्रकृति पूजा की सांस्कृतिक शब्दावली से कविता भरी पड़ी है यथा कुंकुम, कीर्तन, धूप, मंत्र, तोरण, वन्दनवार, अक्षत, अर्घ्य देना, अभिषेक करना आदि। कवि की काव्यात्मक संवेदना में मानवीय मन की उर्ध्वचेता आकांक्षा उमड़ती-घुमड़ती रहती है। फलतः यह कविता नयी कविता के रेगिस्तान में शीतल जल की मधु धारा है। आप चाहे तो इसे प्राचीन भारतीय चिंतन परंपरा निरंतरता के पर्वत से फूटा आधुनिक प्रवाह भी कह सकते हैं।

32.3.3 युद्ध, आधुनिकता और पीड़ा

दोनों आधुनिक विश्व युद्धों की कराह और अमानवीयता को अभिव्यक्ति देना नरेश के काव्य की एक प्रवृत्ति है। पर एक विवशता है, आंतरिक बेचैनी है, मानव को यन्त्र दानव के विनाश से बचा लेने की कोशिश है। संहारक युद्धों के आतंक की थर्राहट "समय देवता" जैसी लम्बी कविता का सम्पूर्ण सच है। कवि देशों में झाँक-झाँककर संजय दृष्टि से कमेन्ट्री करता है। यह पूरी कविता एक सफल काव्यात्मक कमेन्ट्री ही है —

1
समय देवता! बम के गोलों से भी धरती बांझ हुई है
चीन देश के नगर-ग्राम, घाटी जंगल में भरा हुआ धुँआ ही धुँआ
गोबी की मंगोल रेत पर युद्ध लाश दुर्गन्ध दे रही।

युद्धों में मूल्यों का अन्धापन, विकृति, पाशवीकरण का दर्द इस कवि ने 'संशय की एक रात" हो या "समय देवता" में खुलकर व्यक्त किया है। नरेश मेहता कोमल सपनों के कवि नहीं हैं, आधुनिकता से उत्पन्न आधुनिकबोध की पीड़ा के कवि भी हैं —

1 पेकिंग का पिकनी सड़कों पर पिछला जीवन मरा पड़ा है।

2 दूर छिपकली सा वह छोटा टापू है जापान देश का,
जो कि मर चुका एटम बम से।
डूब गई बूटों की टापें, सिसक रहा कोढ़ी सा जीवन
विज्ञान, धुंए के अजगर सा है लील रहा सब रंग रेशमी मनु-श्रद्धा का
हिरोशिमा में मनुज मर गया।

3 वही सृष्टि श्री मनुज आज विज्ञान कब्र में मरा पड़ा है
दौड़ रही है गंधक और फासफोरस की पीली लपटें।

आधुनिकता का नरेश मेहता के सृजन में अर्थ है — विज्ञान के द्वारा किया गया मानव संहार और अवमूल्यन। इस आधुनिकता ने मानव को पीड़ा, दर्द, अवसाद दिया है। जबकि नरेश मेहता अंधेरे में सूर्य का प्रकाश, जीवन की ताजगी, हरियाली के कवि हैं।

32.3.4 विचारधारा और जीवन-दर्शन

नरेश मेहता की विचारधारा पर भारतीय आस्थावादी मूल्यों का गहरा प्रभाव है। वे पश्चिमी नस्लवाद, अलगाववाद, व्यक्तिवाद, अस्तित्ववाद की विचारधारा से सदैव दूर रहे हैं। मार्क्सवाद-भौतिकवाद भी उन्हें सन्तोष नहीं देता। वे आध्यात्मवाद और रहस्यवाद की विचारधारा को भी प्रश्रय नहीं देते। मूलतः उनकी विचारधारा पर वैष्णव-चिंतन-परंपरा के व्यापक मानवतावादी दृश्य और दृष्टि की छाप है। वैष्णव का अर्थ है—बहुजनहिताय, लोक मंगल के लिए जीने वाला प्राणी, भेद बुद्धि से अलग। उत्सवा (1979 ई.) की भूमिका में उन्होंने लिखा है — "व्यक्ति विस्तार के बहुस्याम हो जाने की निष्पलि औपनिषदिकता है — जो व्यक्ति समर्पण की निष्णात प्रतिश्रुति वैष्णवता। एक में परम विराट हो जाने की चिति है, तो दूसरे में एकांत के सानिध्य की दृष्टि। एक में ब्रह्माण्ड है तो दूसरे में वृन्दावन। एक में ताण्डव है तो दूसरे में लास्य। एक में यज्ञभाव है तो दूसरे में लीलाभाव।" यह वैष्णवता कृष्णभाव है, सन्त भाव से जीवन का तप। पराई पीर को जानने का भाव। अतः नरेश मेहता की सर्जनात्मकता को समझने के लिए उनकी इस वैष्णव-चिंतन धारा को भीतर-बाहर से समझना जरूरी है। उनकी दृष्टि में वेद-उपनिषद की सांस्कृतिक संवेदना का जीवन-रंग है और मानव की महिमा में अखण्ड विश्वास। धरती की पूजा ही जीवन की शक्ति-साधना है —

1 धरती को कहीं से छुओ
एक बच्चा की प्रतीति होती है।

2 चलते-चलो, चलते चलो
सूरज के संग-संग चलते चलो।
मानव जिस ओर गया, नगर बने, तीर्थ बने।
तुम से है कौन बड़ा ? गगन, सिंधु मित्र बने।
भूमि का भोगो सुख, नदियों का सोम पियो
त्यागो सब जीर्ण वसन, नूतन के संग-संग चलते चलो।

(दूसरा सप्तक)

"चरैवेति" अर्थात चलते रहो की यह विचारधारा ही नरेश मेहता का जीवन-दर्शन है। गति ही जीवन है और ठहराव मरण। इसलिए अँधेरे पथों पर चलकर सबेरे की ओर चलते रहो। उनकी जीवनदृष्टि को ठीक-ठीक समझने के लिए उनके इस कथन पर ध्यान देना होगा — "वैष्णवी ऊर्ध्वोन्मुखता ही शिवत्व है और शिवत्व की अवतारणा ही वैष्णवता है।" भारतेन्दु ने एक निबंध लिखा है — "वैष्णवता और भारत वर्ष" — इस निबंध की विचारधारा का नरेश मेहता के सृजन-कर्म पर गहरा असर है।

बोध प्रश्न 2

1 नरेश मेहता की काव्ययात्रा के विकास का परिचय सात-आठ वाक्यों में दीजिए ।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2 नरेश मेहता की मूल काव्य-संवेदना की विशिष्टताओं पर चार वाक्यों में प्रकाश डालिए।

.....

.....

.....

.....

3 'ऐतिहासिक सांस्कृतिक अनुभूति को नरेश मेहता कविता बनाते हैं'। इस कथन पर चार-पाँच वाक्यों में विचार कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

4 'मानव और प्रकृति नरेश मेहता की काव्य सर्जना में एकाकार हैं'—यह कहना कहाँ तक उचित है ? तीन-चार वाक्यों में उत्तर लिखिए।

.....

.....

.....

.....

5 युद्ध और आधुनिकता ने इस सांस्कृतिक मनोभाव के कवि को कहाँ तक प्रभावित किया है ? (पाँच वाक्यों में)

.....

.....

.....

.....

.....

6 नरेश मेहता की विचारधारा तथा जीवन-दर्शन दृष्टि पर सात वाक्यों में विचार कीजिए ।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

32.4 अभिव्यंजना शिल्प

नरेश मेहता उन नए रचनाकारों में से हैं जो वस्तु के साथ शिल्प का अभिन्न संबंध मानते हैं। वस्तु के संवेदनात्मक-ज्ञान को शिल्प ही रूपाकार देता है। यही कारण है कि जैसे रक्त को त्वचा से अलग नहीं किया जा सकता है वैसे ही वस्तु को रूप से अलग नहीं किया जा सकता। हर वस्तु अपना रूप स्वयं चुनती है। हर कविता अपनी काव्यानुभूति के संप्रेषण का शिल्प-रूप अपने साथ लाती है। इसलिए मेहता जी की काव्यात्मकता में रूप मात्र "फार्म" मात्र नहीं है वह कथ्य को मूर्त्त करने का समर्थ साधन है। भाषा, बिंब-प्रतीक, मिथक, उपमान, लय उसके उपकरण हैं। इसलिए इस सृजन में वस्तु और रूप का सामंजस्य है। कवि के कथ्य का पूरा सांस्कृतिक संवेदन-सांस्कृतिक भाषा से प्रतीकों मिथकों में अभिव्यक्ति पाता है। संवेदना के उदात्त स्वरों की गरिमा रखने के लिए वे ऐसी दार्शनिक सांस्कृतिक महिमा

की शब्दावली चुनते हैं, जिसमें भाव को आलोकित करने की कलात्मक क्षमता है। मिथक का वे बेहद सर्जनात्मक उपयोग करते हैं जिसमें अतीत और वर्तमान दोनों के अर्थस्वर साफ अनुगूंज छोड़ते मिलते हैं।

32.4.1 काव्यरूप

नरेश मेहता में प्रबंधक्षमता और मुक्तक की संगीतात्मकता, गीतात्मकता दोनों का अद्‌भुत योग है। "संशय की एक रात", "प्रवाद पर्व", "शबरी" तथा "महाप्रस्थान" आदि उनकी प्रबंध कृतियाँ हैं। किन्तु इन्हें पुराने ढंग का कथाकाव्य नहीं कहा जा सकता। रामायण-महाभारत के मिथकों को वे अपने ढंग से सृजन में लाते हैं और नवीन दृष्टि का प्रवेश कराते हुए उसे नए अर्थ-सन्दर्भ से जोड़ देते हैं। इसी दृष्टि से वे नए कवि हैं। उनकी प्रबंध क्षमता हरिऔध, मैथिलीशरण गुप्त, प्रसाद और निराला की प्रबंध-कला से भिन्न दिखाई देती है। इसलिए नरेश मेहता का प्रबंध स्थापत्य नया है—जो प्रबंध काव्य के पुराने अनुशासनों को तोड़कर विकसित होता है। इन कृतियों को महाकाव्य—खंड-काव्य नहीं कह सकते। कहना ही चाहे तो लम्बी प्रबंध-कविताएँ नाम दिया जा सकता है। क्योंकि यहाँ विचार, कथा को बढ़ाता है जबकि पुराने प्रबंधकाव्यों में कथा, विचार को बढ़ाती थी। दूसरे, इन प्रबंधात्मक कविताओं में देश और काल की द्वन्द्व चेतना, तनाव, संघर्ष, पीड़ा, अवसर, विडम्बना और कड़वाहट है जोकि आधुनिक भाव-बोध का सम्पूर्ण सत्य है।

विशेष बात यह है कि कवि ने "समय देवता" जैसी सफल नाटकीय लम्बी कविता का सृजन किया है। नयी कविता की सफलतम लम्बी कविताओं में "समय देवता" का एक विशिष्ट स्थान है। पूरी कविता "कमेन्ट्री" शैली में है। यह अनुभव को अनुभव कराने की कविता है। अपनी संरचना में यह अप्रगीतात्मक लम्बी कविता है।

नरेश मेहता की छोटी-छोटी कविताएँ बहुत हैं इनमें राग-सत्य पूरी कविता को कलात्मकता से "अन्विति" में बाँध देता है। पूरी कविता प्राणी की तरह गठित, रूप के साँचे से मोहती है फलतः इन कविताओं को काव्य के आवयविक सिद्धान्त (आर्गेनिक थ्योरी) से समझा जा सकता है। आवयविक सिद्धांत को समझाते हुए निराला जी ने "प्रबंध प्रतिमा" में लिखा है—"फूल का कला वाला रूप मिलाइये। तने से डालें भिन्न होकर भी जुड़ी हैं, इसी तरह डालों से पत्ते, पत्तों से फूल, फूलों से खुशबू। खुशबू अपने तत्व में सारे पेड़ को ढके हुए है। तने का रूखापन, डालों की थोड़ी-थोड़ी हरियाली, पत्तों की पूरी, फूलों का एक या अनेक रंगों—केसर पराग आदि से विकसित रूप, सुगंध सारे पेड़ के उच्चतम विकास को स्पष्ट करती हुई — उसी में उसी से ढके हुए वह कला है।" यही बात नरेश मेहता की छोटी कविताओं में है। उनकी कविता हरा-भरा पेड़ है जिसके फूलों फलों पर चिड़िया चहकती है और घोंसला बनाती हैं। नरेश मेहता अपनी कविताओं में अर्थ-सौन्दर्य पूरी तरह भरते हैं। अज्ञेय की कविता "कलगी बाजरे" की भांति "चाहता मन" कविता भी प्रेयसी को सम्बोधित करके लिखी गई है—पर कविता के बिंब-उपमान एकदम उजली ताजगी लिए है जो पुरानी कविताओं में नसीब नहीं है। देखिए —

बह गया वह नीर
जिसको पदों से तुमने छुआ था।
कौन जाने धूप उस दिन की कहाँ है,
जो तुम्हारे कुन्तलों में गरम, फूली, धुली, धौली लग रही थी।
चाहता मन,
तुम यहाँ बैठी रहो
उड़ता रहे चिड़ियों सरीखा वह तुम्हारा श्वेत आँचल।

(चाहता मन)

पूरी कविता में नयापन, भाव का उजलापन, सारी तन का आलोक दीपित है। नए छवि-चित्रों से पूरी कविता तैयार की गयी है। कविता का भीतरी गठन और योजना में सामंजस्य बैठाया गया है। इस एक कविता में ही नहीं अनेक कविताओं में यह कला-सौन्दर्य पूरे निखार की तरह या धूप-चाँदनी की तरह खिला मिलता है। प्रगीतों में कवि शब्द संगीत निष्पन्न करता है पर यह सब ऐसे होता है जैसे फूल में रंग आता है, रंग-गंध उठती है। गद्य के सहज विन्यास से काव्यात्मकता को दुहना नरेश मेहता की शक्ति है।

32.4.2 काव्य-भाषा

नरेश मेहता की सर्जनात्मक शक्ति लोकभाषा के शब्द-प्रयोगों से फूटी है। वे लोक-प्रचलित शब्दों को खोज खोजकर कविता में लाते हैं। वे उन कवियों में से हैं जिनके लिए आ. रामचन्द्र शुक्ल ने कहा है कि 'जब पंडितों की काव्यभाषा स्थिर होकर उत्तरोत्तर आगे बढ़ती हुई लोकभाषा से दूर पड़ जाती है और जनता पर प्रभाव डालने की उसकी शक्ति क्षीण पड़ जाती है तब शिष्ट समुदाय लोकभाषा का सहारा लेकर अपनी काव्यपरंपरा में नया जीवन डालता है'। नरेश की काव्य-भाषा में कृषि-जीवन के शब्द और दृश्य द्रष्टव्य हैं —

1 उदयाचल से किरण धेनुएँ हाँक ला रहा वह प्रभात का ग्वाला।

2 किरन धेनुओं का समूह वह आया अंधकार चरता।

3 नभ की आम्र छाँह में बैठा बजा रहा वंशी रखवाला

4 जीवन की नव किरन फूटती मकई के धानों में
सरिताओं में सोम दुह रहा, यह अहीर मतवाला।

काव्य-भाषा में प्रकृति अपने पूरे चित्र-परिधान के साथ मौजूद है। नदी, झील, आकाश, पहाड़, पर्वत, घाटी, जंगल, बादल, सूरज, धूप, फागुनी, दिन, फूल, वसंत, सन्ध्या के साथ पेड़ों-फूलों के नाम की भरमार है। उषा, धूप किरन, सूर्य ऐसे शब्द हैं जो बार-बार कविता में आते हैं पर हर बार अर्थ ध्वनि नई पैदा करते हैं। यह काव्य-भाषा भाव-स्थितियों, मनोभावों की ताजगी, खुलापन, स्फूर्ति एवं सहज शोभा धारण करती है।

कवि ने सभी जगह लक्षणा-व्यंजना के चमत्कार से भाषा में नया अर्थप्रकाश उत्पन्न किया है। रूपकों की भाषा में व्यंजना की चमक रहती है जैसे —

1 धूप, एक सम्भावित सिम्फनी है आकाश की

2 जो हमारे मुखों की रात्रि पोंछ कर दीपित कर जाता है

3 मनुज चल रहा, इसीलिए तो अंधकार में सूर्य चल रहा।

मूलतः यह काव्य-भाषा चित्र भाषा का पर्याय है और चित्र अपने रूपाकार में आकर्षक और सजीव हैं। जैसे कपिला गाय सी यह धूप। कपिला गाय का सीधापन और उसके दूध की गुणवत्ता दोनों का अर्थ-विस्तार एक साथ एक चित्र में भर दिया है।

संस्कृत की तत्सम शब्दावली भाव-प्रवाह में सहज रूप से चली आती है और भाषा की उदात्त संस्कारी-संवेदना की छाप छोड़ जाती है जैसे —

1 एक स्तवक की तरह मेरे हाथों में

2 धूप भरा फाल्गुनी दिन है

उनमें भाषा को विशेषणों से सजाने-सँवारने की आदत है जैसे शस्य-स्यामला, विश्वम्भरा, रूपमयी, पुष्पवती आदि। कवि ने इस क्षेत्र में बंगला-काव्य का अनकरण किया है। किन्तु यह अनुकरण उनकी काव्य-भाषा की सहज स्थिति के अनुकूल नहीं है।

इस काव्य-भाषा की विशेष बात यह है कि कवि ने इसमें वैदिक शब्दावली का मुक्त-हृदय से प्रयोग किया है। ज्यादातर शब्द घोर पारिभाषित है जिन्हें "कोश" की सहायता से भी समझना कठिन पड़ता है। इस तरह के प्रयोगों से अप्रचलित शब्दों को प्रचलित बनाने का संकल्प दुहराया है — दूसरी ओर भाषा में क्लिष्टता बढ़ी है और कवि का साधारणीकरण व्यापार खतरे में पड़ गया है। उदाहरणार्थ उषस, इन्द्र, पूषा, भूमा, सोम, सामगान, ऋचा, समिधा, सविता, सीता, वरूणदेव आदि इस प्रकार के शब्द हैं। सीता का अर्थ धरती है और मिथक भाषा को खोलकर इसका अर्थसंदर्भ स्पष्ट करना पड़ता है। वैदिक सभ्यता यज्ञों और प्रकृति वन्दनाओं, कृषि देवियों और मिथक सर्जकों की सभ्यता थी। वैदिकदर्शन प्रकृति और धरती की महिमा का है।

नरेश मेहता की काव्य-भाषा में जीवन के चटकीले रंग हैं हँसती हुई धरती का लास्य नर्तन है। भाव-भंगिमाओं, वक्रताओं, ध्वनियों नाट्यम संगीत के स्वरों को यह भाषा मूल से पकड़ती है। काव्य के छोटे-बड़े विस्तार में गद्य लय सुनाई देती है, जैसे —

> सोने की वह मेघ चील,
> अपने चमकीले पंखों में ले अंधकार अब बैठ गयी दिन के अंडे पर।
> नदी वधू की नथ का मोती चील ले गई।

विचार के दवाब ने भाषा के भावावेग को कम करते हुए गद्य की ओर प्रवृत्त कर दिया है। रंगों में कवि जीवन छबियों को उभारता है—श्वेत रंग और स्वर्ण कवि को खास रूप से पसंद है। "स्वर्ण किरण", "स्वर्णमयी", "स्वर्ण धूप", "गोली रेत", "कंचन सी बाली", "मोती के धान", "चम्पक सी बांहे", "कंचन रथ", "धूप की पीली तितली" कहना न होगा कि इन प्रयोगों ने भाषा की भाव-आभा को चमका दिया है। एक ओर तो भाषा पर लोकभाषा की तद्भव देशज शब्दावली की धमक है दूसरी ओर आभिजात्य प्रयोगों से भरी असहज भाषा। काव्य-भाषा का यह विरोधाभासी प्रयोग नरेश की काव्य-भाषा की शक्ति और सीमा दोनों ही है।

नरेश मेहता "पीले फूल कनेर के" जैसे लोकगीत लिखते हैं तो भाषा में लोक ध्वनि का संगीत शब्दों से फूट रहा होता है। लहजा, स्वर, बंदिश सभी में ठेठ देशीपन आ जाता है। नयी कविता में नरेश मेहता एक ऐसे कवि हैं जो काव्य-भाषा के प्रयोग में अज्ञेय की ओर झुकते हैं और कथ्य के अनुकूल उदात्त संस्कारी, सांस्कृतिक संवेदना से भीगी और मिथकों के अर्थों से सम्पन्न काव्य-भाषा रचते हैं। शब्द के अर्थ की आंतरिक पकड़ और उसकी आत्मा की खोज नरेश में निरंतर रही है। यह काव्य-भाषा परंपरा की आधुनिकता के लिए बराबर याद की जायेगी।

32.4.3 बिंब-प्रतीक

नरेश मेहता के काव्य और काव्य-भाषा की जो विशेषता पाठकों को सर्वाधिक आकृष्ट करती है — वह है उनकी बिंब-विधान की शक्ति। काव्य-भाषा में बिंब सृजन पर उनका ध्यान केन्द्रित रहता है। ये बिंब विषयवस्तु, भाव-संवेदना को मूर्त-गोचर एवं स्पष्ट बनाते हैं। मिथकों को बिंब में ढाल लेने का उनमें सर्जनात्मक उत्साह है। रूप, रस, गंध,

वर्ण, श्रवण-दृष्टि के बिंबों की यह कविता चित्रशाला है। प्रकृति के बिंब-सौन्दर्य से कविताएँ पटी पड़ी है। उदाहरणार्थ —

1 पूछते हंसों के ये बाल
स्वर्ग से दिखती है यह झील
हिमालय लगता होगा पाल।

2 पुष्ट चिट्टे वृषभों को देख लगेगा दिन बन आया बैल
चोर भूमा को उर आधार उगे सीता में जीवन बेल

3 नदी वधू की नथ का मोती चील ले गई।

4 सांद्र, दिवस की पत्नी, अपने नील महल में बैठी कात रही है
बादल ऋषि की चारों कन्याएँ हैं माँग रही तारों की गुड़ियां।

5 यूनानी मुनि प्लेटो की मुद्रा में बैठे समय सनातन
सूर्या को हो व्याह दिया दिन ने अपने प्रिय मित्र वरूण को।

6 हाथों में नवजीवन की उल्काएँ लेकर मनुज खड़ा है कुतुब सरीखा।

7 मोर पंख सी सजी रमणियाँ

सभी चित्र जाने-पहचाने हैं, किन्तु अनुभव-अनुभूति से उनमें नया बिंब पैदा किया गया है। सृजन के साथ विनाश के बिंब एकदम तीखे और दर्द भरे हैं। जैसे —

1 गोबी की मंगोल रेत पर युद्ध लाश दुर्गन्ध दे रही।

2 पेकिंग की चिकनी सड़कों पर पिछला जीवन मरा पड़ा है।

3 वही सृष्टि श्री मनुज आज विज्ञान-कब्र में मरा पड़ा है।

कवि की प्रतीक-योजना में प्रकृति-प्रतीकों की भरमार है। धूप, सूर्य, किरन, धेनुएँ कवि के प्रिय प्रतीक है। वैदिक प्रतीक सोम, ऋचा वरूण, इन्द्र, सविता बार-बार आए हैं। इन प्रतीकों में मिथकों (पुराख्यानों) का विशिष्ट स्थान है। दार्शनिक-सांस्कृतिक चेतना के भारतीय प्रतीक मनु श्रद्धा, वरूण, सविता, भूमा, सीता निरंतर आते रहे हैं। "शबरी" यदि नारी की व्यथा का प्रतीक है—"प्रवाद पर्व" नारी की तपगाथा का। प्रतीकों को जो जाति जितना अधिक सृजित करती है वह उतनी ही उर्वर होती है। प्रतीकों का सृजन हमारे प्राचीन काल की विशेषता हैं। क्योंकि चिंतन का प्रकृत रूप उसी में था। लोकमन या आदिममन इन प्रतीकों से (भारतीय जाति का) समझा जा सकता है। इन प्रतीकों में हमारी जाति का सामूहिक अवचेतन मौजूद है और आद्य बिंब चमकते हैं। निष्कर्ष यह है कि यह काव्य-बिंब प्रतीक योजना का अनुपम सृजन-विस्तार है।

32.4.4 उपमान योजना

"उपमान" शब्द "अप्रस्तुत" का पर्याय कहा जा सकता है। आजकल का आलोचना में उपमेय-उपमान के स्थान पर "प्रस्तुत-अप्रस्तुत" का अधिक प्रयोग होता है। आलंकारिक योजना का पूरा महल ही प्राचीन आचार्यों ने उपमेय-उपमान पर खड़ा किया है। राधा का मुख-उपमेय और मुख का उपमान-चन्द्रमा, कमल आदि। उपमान का महत्व नवीन भाव-योजना में बहुत अधिक है। परंपरागत उपमानों से नया भाव बोध व्यक्त नहीं हो पाता। ऐसी स्थिति में नए सौन्दर्य बोध को सामने लाने के लिए नए उपमानों की खोज नयी कविता ने पूरी ताकत से की है। यह भी कहना अनुचित न होगा कि नयी काव्य-संवेदना के लिए नया उपमान ही चाहिए। मूलतः नया उपमान एक नया बिंब या प्रतीक ही है। नरेश मेहता के पास ऐसी समृद्ध समर्थ सर्जनात्मक कल्पना है कि वे रूप के नए-ताजे और संश्लिष्ट चित्र खींचते हैं। यथा —

1) तुम यहाँ बैठीं हुई थीं अभी उस दिन।
सेब-सी बन लाल।

प्रेयसी का सेब-सी बन लाल बनकर प्रिय के सामने बैठना राग का रंग-बिंब है। साथ ही पुरुष मन की इच्छा को कवि कितनी सूक्ष्म पकड़ से मूर्त्त करता है। पूरा सम्मूर्तन विधान नया-रूप लेकर आया है।

तुम यहाँ बैठी रहो
उड़ता रहे चिड़ियों सरीखा वह तुम्हारा श्वेत आँचल

(चाहता मन)

यहाँ कविताओं से ऐसे अनेक उदाहरण सहज ही दिए जा सकते हैं वहाँ कवि ने नवीन भाव-संवेदना के लिए काव्यानुभूति में नए उपमान को गूंथ दिया है —

1) अमराई में दमयन्ती सी पीली पूनम काँप रही है।

2) अभी महल का चाँद किसी आलिंगन में ही डूबा होगा।

3) डमरू जैसा देश दिख रहा अमरीका का।

4) किसी फ्रेंनच युवती सा पेरिस, चमकीली किरनों का गाउन पहने सबसे पूछ रहा है, कल की बासी छाया मेरे कुन्तल में तो शेष नहीं हैं।

5) हेलेन सी डेन्यूब किनारे गाउन जैसे बिछ जाते हैं
नाइन्टैंगल बैठी पाइन पर।

6) खाकी वर्दी का युग मेरा

7) घोड़े की छाती से ऊँची स्वर्ण बालिया श्वेत सूर्य से बात कर रही।

नरेश मेहता की काव्यात्मक संवेदना में मानवीय हस्तक्षेप बहुत हैं। प्रकृति के मानवीकरण अलंकार इस कविता की शोभा हैं। ध्यान देने की बात है कि हिंदी की प्रयोगवादी कविता (1043-51 ई.) के काल में नए उपमानों की चर्चा जोर-शोर से चली थी। इस क्षेत्र में नयी कविता के कवि खुलकर आगे आए और नवीन उपमान योजना से नयी कविता को समृद्ध किया। नरेश जी ऐसे ही कवियों में अग्रणी रहे हैं।

32.4.5 छंद और लय

इस कवि की खुली काव्य-संवेदना ने परंपरागत छंदशास्त्र के अनुशासनों को अस्वीकार किया है। अक्षरों की संख्या और वर्ण-गाथा के नियमों के प्रति उनमें शुरू से ही उपेक्षा मिलती है। "खुल गए छंद के बन्ध, प्रास के रजतपाश" की घोषणा का नयी कविता ने आदर किया है। नरेश मेहता के लिए छन्द, विचार, भाव, भाषा की गति को नियन्त्रित करते हैं और भाव अपने साथ लय को, छंद को कर्ण के कवच-कुंडल की भाँति जन्म के साथ ही लाते हैं। विशेष बात यह है कि नरेश मेहता ने अज्ञेय, भवानी प्रसाद मिश्र की भाँति ही वाचिक परंपरा पर ध्यान दिया है। इस परंपरा में कविता को गाकर सुनाने का प्रचलन था। किन्तु मुद्रण युग ने कविता के सामने समस्या खड़ी कर दी और वह 'गाने' से ज्यादा 'पढ़ी' जाने लगी। नयी कविता में छन्द ने अपनी इन्द्रिय बदली है—पहले वह कानों के रास्ते हृदय में उतरती थी — अब आंखों के माध्यम से। वह छोटे-लम्बे वाक्यों, गद्य विन्यासों, विराम संकेतों, चिन्हों, डेशों आदि से अर्थ को स्पष्ट करने की ओर बढ़ती है। प्रश्न, विस्मय, भय, उल्लास, के लिए चिन्ह लगाये जाते हैं—जो कवि के मनोगत भावों को स्पष्ट करते हैं। नरेश मेहता मुक्तछंद और लोकगीतों दोनों में इन चिन्हों का प्रयोग करते हैं। उनकी प्रसिद्ध कविता "समय देवता" मुक्तछंद के गद्य-विन्यास में जीवन के उतार-चढ़ाव की लय को बुनती है। "नाद-लय", "अर्थ-लय", "आंतरिक-लय", "पढ़ने-बोलने की वाक-लय" सभी को नरेश अपनाते हैं। साधारण बोलचाल के गद्य की लय को उन्होंने आदर से अपनाया है एक उदाहरण लीजिए —

समय देवता! आज विदा लो,
किन्तु तुम्हारे रेशम के इस चमक वस्त्र में मिट्टी का विश्वास बाँधकर
भेज रहा हूँ।
मेरी धरती पुष्पवती है,
और मनुज की पेशानी के चरागाह पर दौड़ रही है तूफानों की
नयी हवाएँ।

गद्य के काव्यप्रवेश ने भावावेग को हटाकर यहाँ वैचारिक जीवन-संग्राम की यथार्थ भाषा और लय को जन्म दिया है। नरेश मेहता अनुभूति को ठीक उसी रूप में पकड़कर भाव में निहित लय के अनुसार ज्यों का त्यों उतार डालना चाहते हैं। मानसिक भावों के यथातथ्य अंकन की यह प्रवृत्ति ज्यादातर नए कवियों में है। बातचीत की लय यहाँ तक की नाद की अनुकृति तक "किरन धेनुएँ", "अहं", "उषस" जैसी कविताओं में लाई गई है। कुल मिलाकर कवि मन वास्तविकता के हर कोण और लहजे को छंद में गह लेने का आकांक्षी है। उल्लास अवसाद के गीत, नरेश ने कम नहीं गाएँ हैं पर उनमें लोकधुनों का अनुसरण किया है।

32.5 काव्य वाचन और सन्दर्भ सहित व्याख्या

आप नरेश मेहता के काव्य की प्रवृत्तियों से साक्षात्कार कर चुके हैं। यहाँ पर पाठ्यक्रम में निर्धारित दो कविताएँ और उनके महत्वपूर्ण अंशों की सन्दर्भ सहित व्याख्या प्रस्तुत की जा रही है।

किरन धेनुएँ[1]

उदयाचल[2] से किरन धेनुएँ,
हाँक ला रहा वह प्रभात का ग्वाला।
पूँछ उठाये, चली आ रही
क्षितिज जंगलों से टोली,
दिखा रहे पथ, इस भूमि का

1. गायें; 2. पूर्व का एक (कल्पित) पर्वत जिसके पीछे से सूर्य का उगना माना जाता है।

सारस सुना-सुना कर बोली,
गिरता जाता फेन मुखों से
नभ में बादल बन तिरता,
किरन धेनुओं का समूह
यह आया अन्धकार चरता,
नभ की आम्र छाँह में बैठा, बजा रहा बंशी रखवाला।
ग्वालिन सी ले दूब मधुर
बसुधा हँस-हँस कर गले मिली,
चमका अपने स्वर्ण सींग वे
अब शैलों से उतर चलीं,
बरस रहा आलोक दूध है,
खेतों खलिहानों में,
जीवन की नव किरन फूटती
मकई के धानों में,
सरिताओं में सोभ दुह रहा, वह अहीर मतवाला।

अहं

अहं की चट्टान को यह फोड़ती
आ रही आवाज किसकी
एक गहरी चुप सभी के ओठ सीखें।
बाँसुरी की कब्र पर चुप का कफन मैं।
मुट्ठियों, पत्थर किये हैं बन्द।
कौन?
चुप के वस्त्र को,
तेज सूई की तरह है छेदता?
विश्व के इस रेत वन पर
मैं अहं का मेघ हूँ।
उन दिशा की दासियों के संगमरमर के करों में,
जय वस्त्र मेरा है थमा।
कौन हो तुम?
चाहते किसके पलक असगुन?
क्या नहीं तुम देखते?
आज मेरे अहं कन्धों पर गगन बैठा हुआ।
अहं पर ये अश्रु किसके?
हुंकार से मैं घाटियों की गोद को भरता रहूँगा
जब तलक इस प्रश्न का उत्तर न होगा।
क्या?
मेरी अहं की मीनार की ही नींव में
इस पत्थर हिचकियाँ हैं तो रहा?
एक हिचकी?
प्रतिध्वनित हो चाहती इतिहास होना?
आह! मैं ऊँचा गगन,
"औ" नींव का पाताल, आँसू की नदी में।

उदयाचल से किरन धेनुएँ,
हांक ला रहा वह प्रभात का ग्वाला।
पूंछ उठाये, चली आ रही
क्षितिज जंगलों से टोली,
दिखा रहे पथ, इस भूमि का
सारस सुना-सुना कर बोली,
गिरता जाता फेन मुखों से
नभ में बादल बन तिरता,
किरन धेनुओं का समूह
यह आया अन्धकार चरता,

संदर्भ : रचना का नाम .....

.....

लेखक का नाम .....

.....

लेखक के बारे में .....

.....

प्रसंग : नरेश मेहता ने सृजन पर वैदिक काव्य के सौन्दर्य की अमिट छाप है। वेदों में प्रकृति सौन्दर्य की उपासना है और प्रकृति वहाँ मानव के साथ एकरूप, और एकाकार है। मानव और प्रकृति की यह सहभागिता ही विकासयात्रा का एक जीवनदर्शन प्रस्तुत करती है। प्रकृति में बादल, सूर्य, चन्द्र, तारागण नदी, किरन, निर्झर आदि को देखकर विस्मय-विमुग्ध होने का प्रकृत उल्लास से भरा भाव है। नरेश मेहता मानते हैं कि आज की यान्त्रिकता से मानव की रक्षा जरूरी है और मानव की रक्षा तभी की जा सकती है जब वह प्रकृति के साथ जीने का भाव उत्पन्न करे। यही मूल भाव इस कविता की मनोभूमिका में व्यक्त हुआ है।

व्याख्या : कवि प्रकृति के सौन्दर्य-दर्शन में जीवन की गति और उल्लास पाता है। सबेरे निकलने वाले सूर्य की किरणों को देखकर वह वैदिक ऋषि की भाव मुद्रा में कहता है कि पूर्व दिशा के पर्वत उदयाचल से निकलने वाले सूर्य की किरणें धरती की ओर बढ़ती है ऐसा लगता है मानो गाय चराने वाला सूर्य ग्वाला अपनी किरण रूपी गावों को धरती की ओर हाँक कर ला रहा है। पूरा दृश्य ऐसी दृष्टि देता है मानो दूर-दूर तक फैले हरियाली के जंगलों से जहाँ धरती आसमान मिलते से दिखाई देते हैं — उस क्षितिज से गाय समूह पूँछ उठाये भागता चला आ रहा है। धरती पर गीत गाते सारस-पक्षी की बोली इस भूमि के अभिनन्दन का संकेत दे रही है। उन गायों के मुखों की रौंध (गाय की जुगाली) से आनंद में जो फेन उठाया है मानो वही बादलों में रूप धारण कर तैरता रहता है और सूर्य की किरन रूपी गायों के द्वारा अन्धकार चर लिया गया है यानी नष्ट कर दिया जाता है। प्रकाश और आनन्द की ताजगी से भरा पुलकती धरती को देखकर गायों का रखवाला अमिताभ या सूर्य (विष्णु का रूप कृष्ण) मानों नभ के नीचे आम्रमंजरी की छाया में बैठकर आनन्द की तान छेड़ता है।

विशेष

1 कृष्ण का संबंध गायों से है और गायों का समूह कृष्ण की वंशी पर मोहित होकर उनके साथ चलता है।

2 सूर्य-गाय के वैदिक मिथक को कवि ने एक नए बिंब में प्रस्तुत कर दिया है।

3 सूर्य-आदिम प्रकाश का प्रतीक है। जो मानव को अन्धकार से निकालकर प्रकाश की ओर ले जाता है। वैदिक कृषि-जीवी समाज ने किरण-धेनुओं को ऐसी ही कला दृष्टि में ढाला है।

4 मानवीकरण अलंकार के द्वारा कवि ने सूर्य को ग्वाला और वंशीवादक कृष्ण (विष्णु) के रूप में प्रस्तुत किया है।

5 चरवाहे आम के वृक्षों की छाया में बैठकर निश्चित होकर गाय चराते थे और चैन की वंशी बजती थी। गायों के दूध से जीवन पलता था और किरणों से धरती की हरियाली हंसती थी। इस तरह से यह आदिम अवचेतन का बिंब है।

6 काव्य-भाषा ने प्रकृतिपूजक समाज की सहज चेतना को रूपकों से साकार किया है।

उद्धरण 2

ग्वालिन सी ले दूब मधुर
वसुधा हँस-हँस कर गले मिली,
चमका अपने स्वर्ण सींग वे
अब शैलों से उतर चलीं

बरस रहा आलोक दूध है,
खेतों खलिहानों में,
जीवन की नव किरन फूटती
मकई के धानों में,
सरिताओं में सोम दुह रहा, वह अहीर मतवाला।

संदर्भ : रचना का नाम .....

.....

लेखक का नाम .....

.....

लेखक के बारे में .....

.....

प्रसंग : नरेश मेहता ने सृजन पर वैदिक काव्य के सौन्दर्य की अमिट छाप है। वेदों में प्रकृति सौन्दर्य की उपासना है और प्रकृति वहाँ मानव के साथ एकरूप, और एकाकार है। मानव और प्रकृति की यह सहभागिता ही विकास-यात्रा का एक जीवन दर्शन प्रस्तुत करती है। प्रकृति में बादल, सूर्य, चन्द्र, तारागण नदी, किरन, निर्झर आदि को देखकर विस्मय-विमुग्ध होने का प्रकृत उल्लास से भरा भाव है। नरेश मेहता मानते हैं कि आज की यान्त्रिकता से मानव की रक्षा जरूरी है और मानव की रक्षा तभी की जा सकती है जब वह प्रकृति के साथ जीने का भाव उत्पन्न करे। यही मूल भाव इस कविता की मनोभूमिका में व्यक्त हुआ है।

व्याख्या : कृषि जीवी समाज का जीवन गाय पर निर्भर था। इसीलिए कवि ने वसुधा (धन धारण करने वाली धरती) को ग्वालिन के रूप में देखा है जो मीठी दूब-घास खिलाकर इन गायों को हृदय से प्यार करती है। हरी घास मानों गायों के स्वागत के लिए, उनकी भूख मिटाने के लिए ही धरती रूपी ग्वालिन उगाती है। किरण धेनुएँ अपने सींगों को सोने से मढ़े हुए हैं। सूर्य के आलोक में स्वर्ण का दृश्य उपस्थित है और हरे-भरे शैलों से उतर कर धरती की ओर आती गायों का समूह मनमोहक दिखाई देता है। खेतों खलिहानों में सूर्य किरणें फैलकर फसल को हराभरा करती हैं अन्न उगता है। अतः उसे खेतों में दूध बरसना या जीवन वर्षा कहा है। मकई के हरे-भरे खेतों की हरीतिमा जीवन की नयी उमंगों का संकेत बन जाती है। सरिताएँ विराट प्रकृति की सृजन-आकाक्षाएँ हैं। इन से ऐसा लगता है कि मतवाला अहीर या कृष्ण (विष्णु) इन सरिताओं से सोमरस का दोहन कर रहा हो। ध्यान देने की बात यह है कि प्राचीन काल में सोमरस मधुर पेय था। उसे अमृत तुल्य माना जाता है।

विशेष

1 रूपक के द्वारा ग्वालिन रूपी वसुधा के उल्लास का चित्र प्रस्तुत किया है।

2 खेतों में अन्न काट कर खलिहानों में रखा जाता था। धरती पर अन्न है तो जीवन का रस है।

3 सोम — एक प्राचीन पेय जिसे पीकर मानव और देवता अमृत का स्वाद चखते थे। प्राचीन साहित्य में सोमरस की चर्चा अनेक रूपों में की गई है।

4 वेदों में गाय और ग्वालों का संकेत पाकर ही विद्वान मानते हैं कि कृष्ण कथा प्राचीन है और यह समाज कृषि जीवी रहा होगा।

5 ग्वालिन एक प्राचीन जाति जो दूध, दही, का व्यापार करती थी। इसी जाति ने कृष्ण को अपनाया तथा लोकप्रसार दिया।

6 लोकभाषा में वैदिक काव्य-संवेदना की निष्पत्ति का सराहनीय प्रयास।

7 "दूसरा सप्तक" में यह कविता संगृहीत है।

उद्धरण 3

अहं

अहं की चट्टान को यह फोड़ती
आ रही आवाज किसकी
एक गहरी चुप सभी के ओठ सीखें।
बाँसुरी की कब्र पर चुप का कफन मैं।
मुट्ठियों, पत्थर किये हैं बन्द।
कौन?
चुप के वस्त्र को,
तेज सूई की तरह है छेदता?
विश्व के इस रेत वन पर
मैं अहं का मेघ हूँ।
उन दिशा की दासियों के संगमरमर के करों मे,
जय वस्त्र मेरा है थमा।
कौन हो तुम?
चाहते किसके पलक असगुन?
क्या नहीं तुम देखते?
आज मेरे अहं कन्धों पर गगन बैठा हुआ।
अहं पर ये अश्रु किसके?
हुंकार से मैं घाटियों की गोद को भरता रहूँगा
जब तलक इस प्रश्न का उत्तर न होगा।
क्या?
मेरी अहं की मीनार की ही नींव में
इस पत्थर हिचकियाँ हैं तो रहा?
एक हिचकी?
प्रतिध्वनित हो चाहती इतिहास होना ?
आह! मैं ऊँचा गगन,
"औ" नींव का पाताल, आँसू की नदी में।

संदर्भ : कविता का नाम .....

.....

लेखक का नाम .....

.....

लेखक के विषय में .....

.....

प्रसंग : आधुनिक मनुष्य की सबसे प्रबल समस्या अपना "अहं" है। यह अहं या अहंकार भरा मन हर जगह आड़े आता है और व्यक्ति और व्यक्ति के बीच में एक दीवार खड़ी कर देता है। यह दीवार जितनी ही चट्टानी होती जाती है उतना ही मानव अपने सहज या प्रकृत स्वरूप को खोता चला जाता है। अहं से मुक्ति ही जीवन के प्रति सच्चा समर्पण है और जन-मन से मिलने की खुली इच्छा का परिणाम है।

व्याख्या : कवि अपने वैयक्तिक अवचेतन की आवाज सुनता है। उसे ही सुन-समझकर वह कहता है कि अहंकार की कठोर चट्टान को तोड़कर किसकी आवाज आ रही है? इसी प्रश्नाकुलता से उसे पता चलता है कि अहं के कठोर अहसास ने सभी के ओंठ सिल दिए हैं। कोई मुँह खोलने को तैयार नहीं है ऐसा लगता है जीवन की बाँसुरी का राग मर गया है और उसकी कब्र पर मौन का कफन पड़ा है। लेकिन मौन में भी एक प्रश्न गूँज रहा है कौन पुकारता था — क्यों पुकारता था। यह प्रश्न सुई की नोक की तरह चुभ रहा है और खोजने पर पता चलता है कि विश्व में प्रेम की बंजरता का कारण या राग-संबंधों के रेत हो जाने का कारण मानव का अहं है जो एक दूसरे के बीच अलगाव पैदा करता है। अहं, मेघ की भाँति मन के वन पर घुमड़ता रहता है। सभी दिशाओं का संगमर्मरी पत्थर का कठोर रूप है जिस पर संहारक वज्र का प्रहार होना अभी शेष है। बार-बार मन प्रश्न पूछता है तुम हो कौन — जो चेतना पर घिराव-तनाव डाले हुए हो। क्या तुम्हें मानव के हँसते नेत्रों से प्यार नहीं है क्या तुम नहीं जानते समानता और बन्धुत्व में ही जीवन है। किन्तु हो क्या? आधुनिक मनुष्य ने अपने अहं को इतना बढ़ा लिया है कि वह उसके कन्धों पर सवार हो गया है और उसका विस्तार जगत की तरह अनंत है। कौन है — जो इस झूठे अहं पर आँसू बहा रहा है यह यज्ञ प्रश्न मानव की सहज मन की घाटियों में गूँज रहा है। जब तक इस प्रश्न का उत्तर नहीं मिलेगा मन की ऊँची मीनारों की नींव दबी सहज मीठी स्मृतियों की हिचकियाँ निरंतर आती रहेगी और हर हिचकी में यह अर्थध्वनि उठेगी कि मानव पत्थर नहीं था — कठोर नहीं था — उसका मन मोम सा मुलायम था। इसलिए वह इच्छा जो इतिहास में अपना असर छोड़ना चाहती है वह कठोर है, उसकी कठोरता ही धरती को रौंद कर आसमान छूना चाहती है। किन्तु मीनार सत्य नहीं होती, सत्य होती है वह नींव जो मीनार को थामे खड़ी रहती है और जिसके अश्रुओं की नदी में करुणा का जल प्रवाहित है — जो मानव को जीवन दान देती है।

विशेष

1 इस पूरी कविता में "अहं" के आधुनिक विस्फोट की समस्या को मनोविश्लेषणशास्त्र के संदर्भ में उठाया गया है।

2 कविता को गद्य-लय की वैचारिक पीठिका से उठाया गया है और जीवन की वैचारिकता को नये आयाम में दृष्टि दी गई है।

3 कविता का पूरा बिंब अहं की स्थिति-परिस्थिति के टकराव को सामने लाता है।

4 नयी कविता में इस तरह की बारीक समस्याओं को मूल रागों के साथ प्रायः उठाया गया है।

32.6 मूल्यांकन

उपनिषद् वैष्णव-चिंतन परंपरा, सांस्कृतिक संवेदना मूल्य-दृष्टि और मिथक प्रयोग की शक्ति के कारण नरेश मेहता की नयी कविता में एक बिल्कुल अलग पहचान बनती है। प्राचीन भारतीय संस्कृति का सारवान अंश छन-छन कर उनकी अर्थ-सजग दृष्टि में आता रहा है। वे वेद-उपनिषद् का अनुवाद नहीं करते हैं, बल्कि उसके भावों-विचारों की काव्यात्मकता को नवीन अर्थ सौन्दर्य की संवेदना में निखार देते हैं। उनकी कविता का अर्थ, जीवन की विसंगति-विडम्बना, संशय, तनाव और श्रम के पराजयेपन को लेकर खुलता है और प्राचीन का नवीन संस्कार करते हुए जीवन के आस्थावादी-मानववादी मूल्यों की महत्व-प्रतिष्ठा करता है। समकालीन कविता के चालू नारों और काव्यमुहावरों से वे अपने को अलग करते हैं और परंपरा की सर्जनशीलता को नचिकेता-भाव से नया चिंतन देते हैं। पश्चिम का अनुकरण तो उनमें है ही नहीं, अस्तित्ववादी हवा भी उन्हें कहीं नहीं लगी है। नयी कविता को संस्कारी भाव-बोध, भाषा-दर्शन नरेश मेहता की मौलिक देन है और प्रकृति-सौन्दर्य और भारतीय मिथकों से तदाकार होकर रचना-कर्म में प्रवृत्त होना उनकी काव्य-शक्ति का विश्वास। फलतः उनका काव्य आज की चालू काव्य-प्रवृत्ति से अलग एक विशिष्टि व्यक्तित्व रखता है जिसका सौन्दर्य और स्वाद निराला है।

बोध प्रश्न 3

1 नरेश मेहता के अभिव्यंजना शिल्प की कोई सी दो विशेषताएं लिखिए ।

.....

.....

2 नरेश मेहता के प्रबंध काव्यों तथा मुक्तक काव्यों की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए। (पाँच वाक्यों में)

.....

.....

.....

.....

.....

3 नरेश की काव्य-भाषा की विशिष्टताओं का सात-आठ वाक्यों में उल्लेख कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

4 नरेश मेहता के बिंब-प्रतीक दोनों पर प्रकृति, दर्शन और वैष्णवता की छाप है। इस कथन पर सात-आठ वाक्यों में विचार कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

5 नरेश की उपमान-योजना की तीन विशेषताएं लिखिए।

.....

.....

.....

6 नरेश मेहता के छंदों एवं लयों के प्रयोग की विशेषताओं का पाँच वाक्यों में उल्लेख कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

32.7 विचार संदर्भ और शब्दावली

अग्नि : तेज का देवता। इसकी पत्नी का नाम स्वाहा है। ब्रह्म का ज्येष्ठ पुत्र।

सोम : अमृत, देवताओं का पेय पदार्थ, सोम नामक पौधे का रस।

संश्लिष्ट : साथ-साथ मिला हुआ, जुड़ा हुआ।

सीता : वेदों के अनुसार कृषि की अधिष्ठात्री देवी, पुराण के अनुसार आकाश गंगा की धारा, रामायण के अनुसार राम की पत्नी का नाम।

इन्द्र : शौर्य, युद्ध और वैभव के वैदिक देवता। इनका स्थान आंतरिक्ष है। देवताओं के राजा, नन्दन वन के स्वामी।

उत्सवगीत : लोक गीतों की परंपरा में उत्सवगीतों का महत्वपूर्ण स्थान है। विभिन्न संस्कारों के लिए इन गीतों का लोक प्रचलन।

उमा : शाब्दिक अर्थ है — प्रकाश। शिव की पत्नी का एक नाम।

तांडव : शिव का अत्यंत प्रिय नृत्य।

लास्य : पार्वती द्वारा किया जाने वाला कोमल भाव-भंगिमा का नृत्य।

वेद : चार ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद। वेदों के रचनाकाल का निश्चित रूप से ज्ञान नहीं है पर ऐसा विश्वास है कि ये पाचीनतम ग्रंथ हैं। इनका विस्तार वाचिक परंपरा में हुआ। अतः इन्हें "श्रुति" भी कहा जाता है।

वैष्णव : इस सम्प्रदाय के अनुयायी विष्णु की उपासना करते हैं, महाभारत में इसे नारायणी धर्म कहा गया है। तदुपरांत इसमें कृष्ण की उपासना प्रधान हो गई एवं इसे 'भागवत धर्म' भी कहा गया।

उपनिषद् : इनकी संख्या 108 मानी जाती है। ईशावस्य, केन, कठ, प्रश्न, मुण्ड, छान्दोग्य, ऐतरेय आदि।

32.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

विश्वनाथ प्रसाद तिवारी : *समकालीन हिंदी कविता*, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली।

नामवर सिंह : *कविता के नए प्रतिमान*, राजेंकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली।

रामकमल नरेश मेहता राय : *कविता की उर्ध्व यात्रा*, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद।

32.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1 नरेश मेहता उदात्त क्लासिकल संवेदना के कवि हैं।

2 देखिए 32.2

3 देखिए 32.3

4 "संशय की एक रात" की मूल संवेदना का आधार राम के मन में चलने वाले द्वन्द्व में है। तनाव और संघर्ष में वे घबराते हैं और उनका आचरण मानव की तरह बेचैनी उत्पन्न करता है। कवि ने राम के धीरोदात्त रूप की चादर उतार दी है और उन्हें स्थिति-परिस्थिति के झंझावात में डांवाडोल व्यक्ति चित्रित किया है।

5. ii)

बोध प्रश्न 2

1 देखिए 32.2.3

2 देखिए 32.3

3 देखिए 32.3.1

4 देखिए 32.3.2

5 देखिए 32.3.3

6 देखिए 32.3.4

बोध प्रश्न 3

1 इस अभिव्यंजना शिल्प की प्रथम विशेषता है कि यह वस्तु को कलात्मकता से प्रस्तुत करता है। दूसरी बात यह इस शिल्प में कोरा रूपवादी चमत्कार नहीं है। वस्तु और रूप अभिन्न हैं।

2 देखिए 32.4.1

3 देखिए 32.4.2

4 देखिए 32.4.3

5 देखिए 32.4.4

6 देखिए 32.4.5। कवि ने जीवन की विसंगतियों, विडम्बनाओं को गद्य-लय में ढाल कर प्रस्तुत किया है। बोलचाल की लय, संवाद, विराम-संकेतों, चिह्नों आदि से भी वे अपने अर्थ को सम्प्रेषित करते हैं। प्रगीतों में 'नाद-लय' या 'वाक्-लय' के विधान में वे कुशल हैं और शब्द के संगीत को आदर देते हैं।